ISSN : 2395 - 5104

शब्दार्णव
Shabdarnav

International Refereed Journal of Multidisciplinary Research

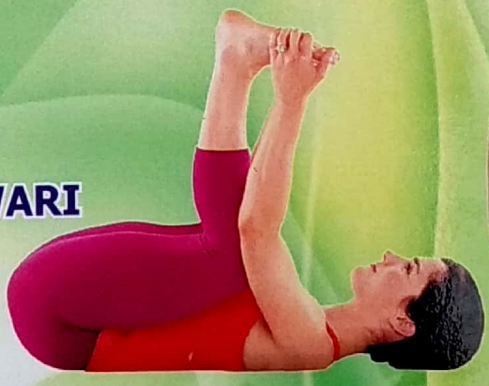

Editor in Chief
RAMKESHWAR TIWARI

Executive Editors
DR. KUMAR MRITUNJAY RAKESH
MR. RAGHWENDRA PANDEY

Published by
SAMNVAY PUBLISHING HOUSE
Mujaffarpur, Bihar

Scanned by CamScanner

योग और अवसाद

राम किशोर*

योगशास्त्र का केन्द्र बिन्दु मन या चित्त है। इसके समस्त सिद्धान्त चित्त पर अवलम्बित है, जैसे "चित्त का वृत्तियों से रहित हो जाना योग है।"[1] "चित्त की प्रथम तीनों अवस्थाएं भोग या दुःख की और अन्तिम दोनों योग की अवस्थाएं है।"[2] चित्त को किसी विषय पर बाँधने का अभ्यास धारणा और उसका बिना किसी व्यवधान के किसी एक विषय पर केन्द्रित हो जाना ध्यान है,[3] आदि। अवसाद रोग भी एक मानसिक रोग है, तथा इस रोग की प्रबलता और निदान का आधार भी मन ही है। इसके समस्त लक्षण एवं उपचार प्रक्रिया दोनों का केन्द्र बिन्दु मन ही है। अतः इस शोधपत्र में मैंने योग मतानुसार अवसाद और इसके निदान की मीमांसा करने का प्रयास किया है।

अवसाद– आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों के अनुसार अवसाद को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जाता है– "अवसाद या डिप्रेशन का तात्पर्य मनोविज्ञान के क्षेत्र में मनोभावों सम्बन्धी दुःख से होता है। इस रोग को सिंड्रोम की संज्ञा दी जाती है। इसका सम्बन्ध मस्तिष्क के उन्हीं क्षेत्रों द्वारा होता है, जहाँ से निद्रा चक्र और जागरण की अवस्था नियन्त्रित होती है।"[4]

"जब मस्तिष्क को पूरा आराम नहीं मिल पाता और उस पर हमेशा एक दबाव बना रहता है तो समझिये कि तनाव ने आपको अपनी चपेट में ले लिया है। तनाव को 20वीं सदी के सिंड्रोम की संज्ञा दी जाती है। डॉक्टरी भाषा में तनाव यानी शरीर के होमियोस्टैसिस में गड़बड़ी। यह वह अवस्था है, जो किसी व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और मनोवैज्ञानिक कार्यप्रणाली को गड़बड़ा देती है। तनाव के कारण शरीर में कई हारमोन्स का स्तर बढ़ जाता है, जिनमें एड्रीनलीन और कार्टिसोल प्रमुख हैं। लगातार तनाव की स्थिति अवसाद में बदल जाती है।"[5]

योग मत के अनुसार "धातु, रस और करण की विषम अवस्था का नाम रोग है।"[6] धातु के तीन (वात, पित्त और कफ) आहार के परिभूत रसों के सात और करण के 13 भेद हैं। जब इनमें से किसी में भी विषमता अर्थात् असंतुलन होता है तो रोग की उत्पत्ति होती है। यद्यपि शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के रोग एक दूसरे को प्रभावित करते है, तथापि धातु एवं रसों की विषमता का सम्बन्ध शारीरिक एवं करणों की विषमता का सम्बन्ध मानसिक रोगों से अनुभव में आता है। अतः योग के अनुसार मानसिक रोग या अवसाद का अर्थ करणों की विषमता है।

यहाँ अवसाद को स्पष्ट करने के लिये सांख्य–योग मत के अनुसार शरीर में होने वाली मानसिक व्यापार (क्रिया) की चर्चा प्रासंगिक है। सांख्य–योग मत में यह शरीर पुरुष के अलावा प्रकृति समेत 24 तत्वों से मिलकर बना है, जिनमें पंचज्ञानेन्द्रियाँ, पंचकर्मेन्द्रियाँ, मन, अहंकार और बुद्धि इन तेरह तत्वों के समुदाय का नाम करण हैं। इन 13 करणों में अन्तिम तीन (मन, अहंकार और बुद्धि) अन्तःकरण तथा शेष 10 (पंचज्ञानेन्द्रियाँ–पंचकर्मेन्द्रियाँ) बाह्यकरण है। योग मत में अन्तःकरण अर्थात् मन, अहंकार और बुद्धि के समुदाय का नाम चित्त है।[7] इनमें बाह्यकरण मात्र वर्तमान विषयक, जबकि अन्तःकरण त्रिकाल विषयक होता है।[8] बाह्यकरण अपने सुनिश्चित विषय ज्ञान को ग्रहण कर उसे मन को उपलब्ध कराते हैं, और मन उस ज्ञान को संस्कारों के रूप में चित्त में संग्रहित करता रहता है। मन सदैव कभी बाह्यकरणों से तो कभी चित्त में संग्रहित वृत्तियों से ज्ञान को ग्रहण करता रहता है। यहाँ मन की दो विशेषताओं को स्पष्ट करना आवश्यक है:–

1. एक समय में एक ही विषय को ग्रहण करना। 2. बिना विषय (ज्ञान) के न रहना।[9]

इस प्रकार अन्तःकरण एवं बाह्यकरण के मध्य होने वाले व्यापार के द्वारा ही प्रत्येक मनुष्यों का दैनिक व्यवहार चलता हैं। इन्द्रियों से प्राप्त होने वाले समस्त विषय ज्ञान के दो प्रमुख विभाग हैं– प्रथम– उनसे सुख की अनुभूति और द्वितीय– उनसे दुःख की अनुभूति। प्राप्त इन सुख–दुःख से क्रमशः राग और द्वेष की उत्पत्ति

*यू.जी.सी.–नेट, आई.सी.पी.आर.–जे.आर.एफ., शोधछात्र, दर्शनशास्त्र विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

Scanned by CamScanner

होती है,[10] जिनकी प्रबलता, अनुभव में आने वाले सुख–दुःख की प्रबलता के आधार पर होती है। जब किसी व्यक्ति को किसी भी बाहय्करण (आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा) के माध्यम् से काफी प्रबल सुख या दुःख की अनुभूति होती है तो वह व्यक्ति प्राप्त उस अनुभव के राग या द्वेष रूपी संस्कारों से इस प्रकार जुड़ जाता है कि वह उन्हीं में उलझ जाता है। चूंकि मन एक समय में एक ही विषय ग्रहण करता है और उसके चित्त का उन प्रबल विचारों से सम्बन्ध विच्छेद नहीं हो पाता है, अतः यहाँ मन करणों के व्यापारों में सामंजस्य स्थापित करने में असमर्थ हो जाता है और इसी करणों की विषमता का नाम अवसाद है।

लक्षणः

1. **शारीरिक लक्षण :–** अत्यधिक थकान का होना, ऊर्जा की कमी महसूस होना, निद्रा की कमी, भूख का अधिक या कम होना, अपच, शरीर में दर्द तथा महिलाओं में अनियमित मासिक चक्र आदि शारीरिक लक्षण अवसाद के रोगी में पाये जाते हैं।
2. **भावनात्मक लक्षणः–** नाकारात्मक सोच, सदैव अपने प्रति किसी षडयन्त्र की अशंका, अकेले रहने की इच्छा, कम बोलना, किसी घटना या विचार में खोये रहना, वर्तमान या प्रत्यक्ष में होने वाली घटनाक्रमों का ज्ञान न होना। अपनो पर भी शंका करना, मनोरंजन की चीजों में अभिरुचि का अभाव आदि भावनात्मक लक्षण अवसाद के रोगी में दिखाई पड़ते हैं।

रोग का कारणः

1. **रसायनिक कारणः** अवसाद कई बार दिमाग के न्यूरोट्रांसमीटर्स की कमी के कारण भी होता है। न्योरोट्रांसमीटर्स दिमाग में पाये जाने वाले रसायन होते हैं, जो दिमाग और शरीर के विभिन्न हिस्सों में तारतम्यता स्थापित करते हैं, इनमें प्रमुख न्यूरोट्रांसमीटर्स– सेरोटॉनिन, नॉरपाइनफ्राइन और डोपामाइन आदि हैं। रसायनों की कमी से भी शरीर की संचार व्यावस्था में कमी आती है और व्यक्ति में अवसाद के लक्षण दिखाई देते हैं। इस तरह का अवसाद अनुवांशिक होता है।
2. **सामाजिक कारणः** विभिन्न प्रकार के तनाव, पारिवारिक कलह, कठिन परिश्रम के बावजूद बार–बार असफलता, लम्बे समय तक किसी बीमारी या किसी अप्रिय परिस्थितियों का बने रहना, अपने किसी विश्वसनीय या आत्मीय द्वारा विश्वासघात से भावनात्मक आघात पहुँचना आदि सामाजिक परिस्थियाँ भी अवसाद का मुख्य कारण होती है। महलिाओं में होने वाला अवसाद अधिकतर इन्हीं कारणें से होता है।
3. विभिन्न प्रकार के ड्रग्स और नशीले पदार्थ या दवायें भी अवसाद का कारण हो सकती है।

इसके अतिरिक्त अन्य और भी महत्वपूर्ण कारक इस रोग के लिये जिम्मेदार हो सकते हैं। परन्तु इस रोग के मुख्य कारण जैसा कि योग के मतानुसार स्पष्ट किया जा चुका है कि कोई भी ऐसी घटना जिसकी प्रबल छाप मन को इस हद तक असामान्य कर देती है कि वह उसी विचार समूह में फंस कर रह जाता है और बाहरी दैनिक जीवन में होने वाले व्यापारों में सामंजस्य नहीं स्थापित कर पाता।

अवसाद और ध्यानः यहाँ कुछ प्रश्न स्वभाविकरूप से उत्पन्न होते हैः

1. अवसाद की अवस्था में भी चित्त किसी एक ही विषय पर अधिकतम् केन्द्रित रहता है, जबकि उत्तम मानसिक स्वास्थ्य या ध्यान में भी। अतः दोनों में समानता एवं भेद क्या है?
2. अवसाद की अवस्था में ध्यान या इस प्रकृति के अभ्यास करने चाहिये या नहीं?

यद्यपि अवसाद एवं ध्यान दोनों में चित्त किसी एक विषय पर ही अधिकतम् केन्द्रित रहता है, परन्तु एक योग या स्वास्थ्य के सभी आयामों की ओर अग्रसर होने की अवस्था है तो दूसरी रोग की अवस्था है। अतः उपरोक्त दोनों अवस्थायें सर्वथा विपरती होते हुए भी उनमें कुछ समानतायें भी हैः

समानता :

1. दोनों अवस्थाओं में मन अधिकतर किसी एक ही विषय पर केन्द्रित रहता है।
2. दोनों अवस्थाएं जैसे–जैसे प्रगाढ़ होती जाती है, वैसे–वैसे मन बाहय्करणों से विषयज्ञान लेना कम करता जाता है।
3. दोनों अवस्थाओं में मनोरंजन के साधनों में क्रमशः रूचि का अभाव होता जाता है।
4. दोनों अवस्थाओं की प्रकृति बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी की ओर होती है।

Scanned by CamScanner

असमानता :

1. जब किसी विषय की प्रबलता इतनी अधिक होती है कि उससे उत्पन्न राग या द्वेष अन्तःकरण को इस सीमा तक प्रभावित कर देते है कि अन्तःकरण में उसी विषय के संस्कार बार–बार पुनरावृत्ति करने लगते हैं, और दोनों करणों (अन्तःकरण और बाह्यकरण) के मध्य का सामंजस्य बिगड़ जाता है, जिसके कारण व्यक्ति अपने आप को विषयों के संस्कारों की पुनरावृत्ति से बाहर निकालने में असमर्थ हो जाता है। जबकि ध्यान में साधक अपनी रूचि के अनुसार किसी एक विषय का निर्धारण कर मन को उस पर बाधने (एकाग्र करने) का अभ्यास करता है।[11]
2. अवसाद की उत्पत्ति मन की कोमल भावनाओं के अघातिक होने पर होती है, जबकि ध्यान लगातार किसी विषय पर मन को केन्द्रित करने के अभ्यास एवं राग–द्वेष की प्रबलता कम होने से सम्भव होती है।
3. अवसाद में स्वास्थ्य संवर्धक हारमोन्स जैसे सेरोटॉनिन, नॉरपाइनफ्राइन, डोपामाइन आदि का स्रावण कम हो जाता है जबकि ध्यान की अवस्था में इन्हीं हारमोन्स का स्रावण समुचित मात्रा में होने लगता है।
4. अवसाद एवं ध्यान दोनों अवस्थाओं में बाह्य विषय अन्तःकरण को कम या नहीं प्रभावित करते है, परन्तु इसका कारण अवसाद में अन्तःकरण में विद्यमान राग या द्वेष के प्रबल संस्कार होते हैं, जबकि ध्यान में साधक द्वारा मन को नियन्त्रित करने की योग्यता के कारण होता है।[12]
5. अवसाद में स्वास्थ्य के सभी स्तरों में गिरावट होती है, जबकि ध्यान के अवस्था में स्वास्थ्य के सभी स्तरों में संवर्धन होता है।

योगाभ्यास द्वारा अवसाद का प्रबन्धन– उपर्युक्त विवरण से 'मन' के स्तर की तीन अवस्थायें स्पष्ट होती हैः–

1. **सामान्य अवस्थाः** इस अवस्था में 'मन' के द्वारा अन्तःकरण एवं बाह्यकरण में सामान्य व्यापार होता रहता है, तथा योगांगों के अभ्यास से क्रमशः मानसिक स्वास्थ्य के स्तर में बृद्धि होते हुए अभ्यासी पूर्ण मानसिक स्वास्थ्य की अवस्था को प्राप्त करता है।
2. **अवसाद की अवस्थाः** इस अवस्था में अन्तः एवं बाह्य करणों के मध्य सामंजस्य बिगड़ जाता है। रोगी अन्तःकरण के व्यापारों में इस सीमा तक प्रभावित हो जाता है कि उसका लोक सामान्य व्यवहार भी असामान्य हो जाता है। तथा वह बाह्यकरणों के व्यापारों को भी ग्रहण करने में असमर्थ हो जाता है।
3. **पूर्ण मानसिक स्वास्थ्य की अवस्थाः** योगसूत्र इसे चित्त की एकाग्रावस्था का नाम देता है। इस अवस्था में योगी का मन पर पूर्ण नियन्त्रण रहने के कारण वह इसे इच्छानुसार किसी भी विषय पर केन्द्रित कर सकता है। इस अवस्था में मन की सामार्थ्य पूर्ण विकसित हो चुकी होती है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि इन तीनों अवस्थाओं में प्रथम अवस्था ही केन्द्र की अवस्था है। इस अवस्था से ही मन की क्षमताओं का विकास कर पूर्ण स्वास्थ्य को प्राप्त किया जा सकता है, साथ ही साथ मानसिक रोगों से बचाव भी किया जा सकता है। दूसरी जो अवसाद की अवस्था है, इस अवस्था के रोगी को प्रथम अवस्था में लाना आवश्यक है, अतः इन्हें सर्वप्रथम अन्तर्मुखी से बहिर्मुखी होने वाले अभ्यास ही करने चाहिए, ऐसे रोगी को वहिर्मुखी से अन्तर्मुखी कराने वाले सभी अभ्यास हानि पहुँचायेंगे क्योंकि इस प्रकृति के अभ्यासों द्वारा रोगी का और अधिक सम्बन्धित विषय से जुड़ाव होगा। अतः अवसाद के रोगी को ध्यान या इस प्रकृति के अभ्यासों से हानि की सम्भावना अधिक रहेगी।

योगाभ्यास–शोधन क्रियाएँः– शोधन क्रियाएं अर्थात् षट्कर्म में प्रमुखरूप से कपालभाति, कुंजल, लघुशंखप्रक्षालन, जल नेति आदि में जो अभ्यास रोगी द्वारा किया जाना सम्भव हो उन्हें रोगी के अन्य रोग एवं सामर्थ्य को देखते हुये कराना चाहिए।

आसनः– आसनों के अभ्यास में संतुलन प्रकृति के अभ्यास जैसे– वृक्षासन, गरूड़ासन, ताड़ासन, नटराजासन आदि तथा गति स्वभाव (Dynamic) वाले अभ्यास जैसे सूर्य नमस्कार, प्रज्ञायोगव्यायाम आदि विशेष रूप से लाभकारी हैं। इसके अतिरिक्त भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, उत्तानपादासन, सर्वांगासन, सेतुबंधासन, पवनमुक्तासन, उष्टासन, शशांकासन आदि का अभ्यास भी आवश्यकता एवं सामर्थ्य को ध्यान में रखकर किया जा सकता है।

Scanned by CamScanner

प्राणायामः– लयबद्ध श्वास–प्रश्वास, अनुलोम–विलोम, भस्त्रिका, उज्जायी।

विशेष :

1. यदि रोगी अवसाद के साथ अन्य किसी रोग से भी प्रभावित है तो उन रोगों को ध्यान में रखकर ही अभ्यास का निर्धारण करना चाहिये।
2. मैंने अपने व्यक्तिगत अनुभव में भस्त्रिका प्राणायाम को अवसाद की अवस्था में विशेषरूप से लाभकारी पाया है, परन्तु इसका अभ्यास हृदयरोग, उच्चरक्तचाप, फेफड़ों की टी.वी., मिर्गी इत्यादि रोगों में नहीं करना चाहिये।
3. इसी प्रकार अन्य अभ्यासों की सावधानीयों का ध्यान में रखकर योगाभ्यास समूह का चयन करना चाहिये।
4. योगाभ्यास समूह (Yoga Package) का निर्धारण मात्र किसी एक रोग के आधार पर नहीं किया जा सकता है। इसके निर्धारण में अभ्यासी के विषय में पूर्ण जानकारी आवश्यक है– जैसे रोगी की आयु, लिंग, व्यवसाय अवसाद के अतिरिक्त अन्य कोई रोग यदि हो तो, शारीरिक क्षमता तथा अन्य सामाजिक, जैविक और भावनात्मक तथ्य। अतः योगाभ्यास समूह (Yoga Package) का निर्धारण एवं उनका अभ्यास सदैव किसी योग्य एवं अनुभवी (Qualified and Experienced) योग प्रशिक्षक की देखरेख में ही होना चाहिए।

सन्दर्भ :

1. योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः। योगसूत्र 1.2
2. स्वामी हरिहरानन्द आरण्य, पातंजल योगदर्शनम्, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1987, पृष्ठ 4–5।
3. देशबन्धश्चित्तस्य धारणा। योगसूत्र 3.1, तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्। योगसूत्र 3.2
4. https://hi.wikipedia.org/s/2f6
5. http;//www.livehindustan.com/news/article1-Depression-world-health-organization.
6. व्याधिर्धातुरसकरणवैषम्यस। व्यासभाष्य 1.30
7. BKS IYENGAR, The Illustrated Light on Yoga, Harper Collins Publishers, New Delhi, 1997, Page-2.
8. अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा बाह्यां त्रयस्य विषयाख्यम्। साम्प्रतकालं बाह्यं त्रिकालमाभ्यन्तरं करणम्।। सांख्यकारिका 33
9. प्रमाणादिलक्षणव्यापारैः चित्तं जीवति। योगवार्तिक 1.5
10. दुःखानुशयी द्वेषः। योगसूत्र 2.8, सुखानुशयी रागः। योगसूत्र 2.7
11. देशबन्धश्चित्तस्य धारणा। योगसूत्र 3.1
12. तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्। योगसूत्र 3.2

संदर्भ ग्रन्थ :

1. डॉ. मकरन्द मधुकर गोरे, शरीर विज्ञान और योगाभ्यास, डोलिया पुस्तक भण्डार, हरिद्वार, 2009।
2. स्वामी हरिहरानन्द आरण्य, पातंजलयोगदर्शनम्, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1987।
3. महर्षि पतंजलि, योगसूत्र, अनुवादकः विमला कर्नाटक, (व्यासकृति–व्यासभाष्य, वाचस्पतिकृति– तत्त्ववैशारदी, और विज्ञानभिक्षुकृति टीका–योगवार्तिक) भाग 1–4, काशी हिन्दुविश्वविद्यालय एवं रत्ना पब्लिकेशन्स, वाराणसी, 1992।
4. GANGANATHA JHA, पातंजलयोगदर्शनम्, Theosophical Publication, Bombay, 1907.
5. प्रो0 रामहर्ष सिंह, योग एवं यौगिक चिकित्सा, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2006।
6. वाचस्पतिमिश्र, तत्त्वकौमुदी, सम्पादकः रामशंकर भट्टाचार्य, मोतीलाल बनारसीदास, बनारस, 1967।
7. महर्षि घेरण्ड, घेरण्ड संहिता, अनुवादक एवं व्याख्याकारः निरंजनानन्द सरस्वती, बिहार योग भारती, मुंगेर बिहार, 1997।
8. डॉ एच. आर. नागेन्द्र, प्राणायाम कला और विज्ञान, स्वामी विवेकानन्द योग प्रकाशन, बेंगलोर, 2006।
9. डॉ सुरेन्द्र सिंह, योग एक परिचय, शुलभ प्रकाशन, लखनऊ, 1997।
10. स्वात्माराम–कृति, हठप्रदीपिका, कैवल्यधाम श्रीमन्माधव योगमान्दिर समिति, पुणे–महाराष्ट्र, 2003।
11. स्वामी विवेकानन्द, ध्यान तथा इसकी पद्धतियाँ राम कृष्ण मठ, नागपुर, 2004।

***

Scanned by CamScanner